अध्याय-1

प्रस्तावना

विज्ञान प्रकृति और जीवधारियों से संबंधित हमारे ज्ञान का सवंर्धन करता है। यह ब्रह्माण्ड की कई अज्ञात चीजों का पता लगाने में मनुष्यों की सहायता करता है तथा व्यावहारिक समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करता है। वस्तुतः मानव जीवन की गुणवत्ता को सुधारने के साथ-साथ विज्ञान के कई अन्य कार्य भी हैं। यद्यपि प्राचीन काल में मनुष्य ने आधुनिक युग की तरह उन्नति नहीं की थी, विज्ञान अज्ञात था, फिर भी मनुष्य को यह अभास था कि जीवित रहने के लिए जल अत्यन्त महत्वपूर्ण है और इसलिए प्राचीनतम सभ्यताएं मुख्य रूप से हाइड्रोलिक प्रकृति की रही हैं क्योंकि उनकी भिन्न-भिन्न जरूरतों की पूर्ति के लिए जल एक विश्वसनीय स्रोत रहा है। नदियों ने उन लोगों के जीवन तथा रहन-सहन में ऐसी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई कि उनकी सभ्यताओं को नदी घाटी सभ्यताओं के रूप में जाना जाने लगा। इनमें से प्रमुख मिश्र की नील घाटी सभ्यता, मेसोपोटामिया में टिग्रीस घाटी सभ्यता, चीन में होवांग-हो घाटी सभ्यता तथा भारत में सिंधु घाटी सभ्यता थी। इनमें से अधिकतर सभ्यताएं 3500 से 300 ईसा पूर्व तक मौजूद थी और इस बात के ऐतिहासिक साक्ष्य उपलब्ध हैं जो यह दर्शाते हैं कि नदियों को अक्षुण्ण रखने तथा उनसे अधिकाधिक लाभ के साथ-साथ बाढ़ और सूखे के कारण होने वाली क्षति से उनकी सुरक्षा के लिए कुछ अभियांत्रिक उपायों को भी अपनाया गया था।

मानवजाति ने तकरीबन 10000 वर्ष पहले स्थायी बस्तियों की स्थापना की जब लोगों ने जीने के लिए खेती-बाड़ी के तरीके अपनाए। स्थायी रूप से बसने तथा कुछ हद तक सुरक्षित जीवन के कारण, जनसंख्या पहले से कहीं अधिक तेजी से बढ़ने लगी तथा व्यवस्थित कृषि जीवन द्वारा गांवों, शहरों और अन्ततः राज्यों का निर्माण संभव हुआ और ये सभी जल पर अत्यधिक निर्भर थे (वोरिनिन एट.एल. 2007)। इसने मनुष्यों और जल के बीच एक अद्वितीय संबंध बनाया। प्राचीन सभ्यताएं जैसे कि सिंधु घाटी, मिश्र, मेसोपोटामिया और चीनी उन स्थानों पर विकसित हुई जहां कृषि तथा मानव आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पानी सुगमता से उपलब्ध था, यानि झरनों, झीलों, नदियों तथा कम समुद्र तल के निकट (यन्नोपोलस एट. अल., 2015)। सामाजिक स्थिरता के साथ-साथ नदियों से अधिकाधिक लाभ लेने और हानिकारक बाढ़ और अन्य हाइड्रोलोजिकल चरम सीमाओं से बचाने के लिए वस्तुत: सभी प्राचीन सभ्यताएं अत्यधिक विकसित तथा तकनीकी रूप से सुसज्जित थी। गुरूत्वाकर्षण के प्रयोग द्वारा अधिक दूरी तक जल पहुंचाने के लिए लम्बे एक्वाडक्ट सिस्टम (वास्तव में, कभी-कभी 100 किमी. से

अधिक) का भी उपयोग किया जाता था। इसके अलावा, कांस्य युग (सीए 3200-1100 ईसा पूर्व) के समय से वर्षा जल के संग्रहण के लिए जलकुंड़ों, नहरों और भूजल कूपों का भी उपयोग किया जाता था। हालांकि, इन सभ्यताओं के पतन और इनमें से कुछ के क्रमिक क्षय को मानव जाति द्वारा लाभ अर्जित करने के लिए नदियों के हाइड्रोलॉजी और हाइड्रोलिक्स में हस्तक्षेप के प्रतिकूल और हानिकारक परिणामों से निपटने की अक्षमता के लिए भी माना जा सकता है। स्कारबोरो एट.एल. (2003) तथा ऑर्टलोफ एट.एल. (2009) ने समीक्षा की है कि किस तरह पूर्वी प्रबंधन ने पूर्वी और पश्चिमी गोलार्द्धों में विशिष्ट उदाहरणों के माध्यम से प्राचीन सामाजिक संरचनाओं और संगठनों को प्रभावित किया जिसमें पूरी प्राचीन दुनिया शामिल थी।

यह सर्वविदित है कि आध्यात्मिक मूल्यों के संदर्भ में भारतीय विरासत एक महान और उत्कृष्ट तथा संभवतः अद्वितीय है, जैसा कि पश्चिम के कुछ महान व्यक्तियों ने प्रमाणित किया है जिन्होंने संस्कृत सीखने के लिए कठिन परिश्रम किया और विश्व को सुप्रसिद्ध वेद और उपनिषदों का अंग्रेजी एवं जर्मनी में अनुवाद प्रस्तुत किया। आध्यात्मिक विकास के अलावा, प्राचीन भारत ने विज्ञान के विकास को भी प्रदर्शित किया। सिंधु घाटी सभ्यता जो कि सबसे पुरानी तथा सबसे विकसित सभ्यताओं में से एक है, विस्तार में दुनिया की सबसे बड़ी तथा प्रोटो-ऐतिहासिक भारतीय उपमहाद्वीप में विज्ञान तथा समाज के विकास के स्तर का प्रतीक है। प्राचीन भारतीय साहित्य, वेदों के युग से, विज्ञानों के इस विकास को प्रदर्शित करते हैं जिसमें जल विज्ञान भी शामिल है। सौभाग्य की बात है कि प्राचीन भारतीय संस्कृत के उत्कृष्ट कार्यों को संरक्षित किया गया है तथा भारत में विदेशी संस्कृतियों एवं जातियों का कई सदियों तक अधिपत्य होने के बाद भी इसे खोया नहीं गया है।

प्राचीन भारत में विज्ञान

वैज्ञानिक दुनिया के बहुत कम शोधकर्ता ही इस बात की जानकारी रखते हैं, जैसा कि वैज्ञानिकों द्वारा समझा और स्वीकारा गया है, कि प्राचीन संस्कृत साहित्य में कितना विज्ञान निहित है। यह एक अहम प्रश्न है कि ‘‘क्या प्राचीन ऋषियों-संतों ने आधुनिक विज्ञान के श्रमपूर्वक एकत्र किए गए प्रेक्षण आंकड़ों तथा उचित संकल्पना के माध्यम से उन्हें समाकलित करने की कार्यपद्धति को अपनाया होगा’’? सर्वविदित है कि अन्तर्निहित सच्चाई को समझने के माध्यम के रूप में प्रेक्षण को नजरअंदाज नहीं किया जा सका।

विज्ञान को ‘‘प्राकृतिक घटनाओं के सुव्यवस्थित ज्ञान और जिन संकल्पनाओं में इन घटनाओं को व्यक्त किया गया है उसके बीच संबंधों के तर्कसंगत अध्ययन" के रूप में परिभाषित किया जाता है। इसका व्यापक अर्थ ‘‘ भौतिक जगत को वर्णित तथा नियंत्रित करने

की एक व्यवस्थित कार्यपद्धति" भी है । यह देखा जा सकता है कि वैज्ञानिक जो कुछ भी इस प्रकृति में पाते हैं वह उन्हें उसी क्रम में एक तार्किक एवं अनुकूल विवरण प्रदान करते है। यह प्रक्रिया मानव जीवन को धीरे-धीरे प्रभावित करती है।

भारत में तीसरी/चौथी सहस्राब्दी ईसा पूर्व की शुरूआत में एक उच्च विकसित सभ्यता जिसे सिंधु घाटी सभ्यता या हड़प्पा सभ्यता (कांस्य युग सभ्यता) के रूप में जाना जाता है, पाकिस्तान और उत्तर-पश्चिम भारत के हिस्सों में सिंधु नदी के उपजाऊ मैदानी भागों में पनपी। हड़प्पा सभ्यता मुख्य रूप से भारत के गुजरात, हरियाणा, पंजाब, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, जम्मू एवं कश्मीर राज्य तथा पाकिस्तान के सिंध, पंजाब तथा बलोचिस्तान प्रांतों में स्थित थी। यह मुख्य रूप से सिंधु और घग्गर-हकरा नदियों के क्षेत्रों में स्थित थी। प्रमुख शहरी केंद्र हड़प्पा, मोहन जोदड़ो, ढोलावीरा, गनेरीवाला तथा राखीगढ़ी में थे।

सिंधु सभ्यता के लोगों ने खूब वैज्ञानिक तरक्की की। उन्होंने लम्बाई, द्रव्यमान तथा समय मापने में बड़ी दक्षता प्राप्त की। ये लोग समान वजन तथा माप की पद्धति विकसित करने वाले पहले व्यक्तियों में से थे। विभिन्न समारोहों तथा अनुष्ठानों के लिए वैदिक कैलैन्डरों की तैयारी ने आकाशीय पिण्डों और उनके आवागमन के अध्ययन की आवश्यकता जताई और इससे खगोल विज्ञान का विकास हुआ। वैदिक आर्यों को यह तथ्य ज्ञात था कि सूर्य के प्रकाश में सात रंग की किरणें होती हैं जैसा कि ऋग्वेद (आर.वी II.12.12) के निम्नलिखित श्लोक से स्पष्ट होता हैः

यःसप्तरश्मिर्वृषभस्तुविष्मानवासृजत्सर्तवेसप्तसिन्धून।
योरोहिणमस्फुरद्वज्रवाहुर्घामारोहन्तं स जनासइन्द्रः। (आर.वी II.12.12)

जिसका अर्थ है कि सात रंगों की किरणों वाला सूर्य नदियों में पानी के प्रवाह का कारण है (वर्षा की वजह से)। वर्षा के बाद, यह फिर से पृथ्वी से पानी को आकर्षित करता है और यह चक्र निरंतर चलता रहता है।

भारतीय अंकगणित उल्लेखनीय है क्योंकि कि इसमें इस बात के प्रमाण हैं कि तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व नोटेशन की एक प्रणाली विकसित की गई थी जिससे आज भी प्रचलित संख्याओं की प्रतिलिपि बनाई गई थी, आर्यभट्ट (476-550 सी.ई.) जो कि एक महान गणितज्ञ तथा खगोलशास्त्री थे ने अंकगणितीय श्रृंखला के सारांश का अध्ययन किया और क्वाडरेटिक इंडिटरमिनेट समीकरणों को हल किया। सातवीं शताब्दी के महान गणितज्ञ ब्रह्मगुप्त ने खगोलीय समस्याओं के लिए स्पष्ट रूप से सामान्य बीजगणीतीय पद्धतियों के अनुप्रयोग को

विकसित किया। उपचार विद्या की शुरूआत तथा जड़ी बूटियों के उपचार की जानकारी अथर्वेद के ''कौशिकसूत्र" में पाई जाती है। सुस्रुता तथा चरक प्रसिद्ध सर्जन और चिकित्सक थे। बौद्ध काल के दौरान, प्रसिद्ध विद्वान जीवक अपने अद्भुत चिकित्सा और शल्य चिकित्सा के उपचार के लिए प्रख्यात थे। तक्षशिला, नालन्दा तथा विक्रमशिला के प्राचीन विश्वविद्यालयों में चिकित्सा भी एक महत्वपूर्ण एवं अनिवार्य विषय था। सातवीं शताब्दी के बागभ्ट के चिकित्सा कार्य में मरकरी (पारा) का पहला उल्लेख (प्रसाद, 1980) शामिल है। भारत के बौद्ध दर्शनशास्त्र की सबसे उल्लेखनीय विशेषता कणाद (600 ई. पूर्व) (प्रकाश, 1965) के परमाणु सिद्धान्त का निर्माण है। विश्वास (1969) ने सही टिप्पणी की है कि भारत, चीन, अरब देशों के अग्रणी योगदान के बिना यूरोप में आधुनिक विज्ञान की तरक्की शायद ही संभव हो पाती।

लम्बे समय तक विदेशी शासकों के प्रभुत्व ने संस्कृत और अन्य साहित्यों की वैज्ञानिक लेखन को आगे नहीं बढ़ने दिया। आजादी के बाद भी, इस स्थिति में कोई सुधार नहीं हुआ और इसका स्पष्ट कारण यह है कि आधुनिक वैज्ञानिकों तथा संस्कृत विद्वानों के बीच कोई पारस्परिक अन्तःक्रिया एवं संवाद की कमी है। वैज्ञानिकों ने प्राचीन संस्कृत साहित्य में उपलब्ध वैज्ञानिक सामग्री के बारे में कभी भी ध्यान नहीं दिया और संस्कृत विद्वानों ने संस्कृत कार्यों में उपलब्ध वैज्ञानिक प्रकृति की समस्याओं पर ध्यान केंद्रित करने की परवाह नहीं की। वे स्वयं ''व्याकरण" मिमांशा इत्यादि जैसी समस्याओं में उलझ कर रह गए। इसलिए आज तक भी, प्राचीन कार्यों की वैज्ञानिक सामग्री लगभग पूरी तरह से अज्ञात और अविश्लेषित बनी हुई है।

भारतीय परम्पराओं में जल का महत्व

भारतीय परम्पराओं में जल का महत्व प्राचीन काल से ही रहा है, और भारत को संस्कृति और अध्यात्म की भूमि कहा जाता है। भारतीय लोगों के सांस्कृतिक और धार्मिक जीवन पर जल का हमेशा एक व्यापक प्रभाव रहा है। मोहन जोदड़ों का ''महान स्नान गृह" इस बात का एक अद्भुत प्रमाण है (चित्र 1.1)। इस स्नान गृह को विद्वानों द्वारा ''प्राचीन विश्व का सबसे पुराने सार्वजनिक जल टैंक" के रूप में माना जाता है। हालांकि इस संरचना का यथार्थ महत्व ज्ञात नहीं है, फिर भी अधिकांश विद्वान इस बात से सहमत हैं कि इस टैंक का उपयोग विशेष धार्मिक अनुष्ठानों के लिए किया गया था।

चित्र 1.1 मोहन जोदड़ो का महान स्नानागार (स्रोत:विकीपीडिया)

भारत में शुष्कतम मौसम और पानी की कमी ने जल प्रबंधन के क्षेत्रों में कई अन्वेषी कार्यों को मूर्तरूप दिया है। सिंधु घाटी सभ्यता के समय से इस पूरे क्षेत्र में सिंचाई प्रणाली, भिन्न-भिन्न प्रकार के कूपों, जल भण्डारण प्रणाली तथा न्यून लागत और अनवरत जल संग्रहण तकनीकें विकसित की गई थी। 3000 ईसा पूर्व में गिरनार में बने जलाशय तथा पश्चिमी भारत में प्राचीन स्टेप-वैल्स कौशल के कुछ उदाहरण हैं। प्राचीन भारत में जल पर आधारित तकनीकें भी प्रचलन में थी। कौटिल्य के सदियों पुराने लिखे अर्थशास्त्र (400 ईसा पूर्व) में हस्तचालित कूलिंग उपकरण ''वारियंत्र" (हवा को ठंडा करने के लिए घूमता हुआ जल स्प्रे) का संदर्भ दिया गया है। पाणिनी (700 ईसा पूर्व) के ''अर्थशास्त्र" और ''अष्टाध्यायी" में वर्षामापी (नायर, 2004) यंत्रों का विधिवत संदर्भ उपलब्ध है।

चित्र 1.2 : धोलावीरा में परिष्कृत जलाशय, प्राचीन सिंधु घाटी सभ्यता में हाइड्रोलिक सीवेज सिस्टम्स का प्रमाण। (स्रोत:विकीपीडिया)

वैदिक और अन्य भारतीय परम्पराओं में ग्रहों तथा नदियों सहित सभी प्राकृतिक शक्तियों को देवताओं और देवियों के रूप में माना जाता है और इनकी पूजा की जाती है। प्रांरभिक भारतीय संस्कृति नदी क्षेत्रों के निकट विकसित हुई। वास्तव में देश के नाम की व्युत्पत्ति सिंधु नदी के नाम से की गई है। गंगा, यमुना, सरस्वती, नर्मदा, गोदावरी, कृष्णा और कावेरी नामक सातों नदियां सांस्कृतिक आधार पर महत्वपूर्ण मानी जाती है। उदाहरण के लिए पवित्र नदी गंगा पौराणिक रूप से भगवान शिव से जुड़ी है और हिंदुओं द्वारा आत्मा की शुद्धि और मस्तिष्क के पुनरूद्धार के प्रतीक के रूप में मानी जाती है। पूरे भारत के लोग अपने पापों को धोने के लिए पवित्र नदी में डुबकी लगाते हैं। पूजा अनुष्ठान के पश्चात मंदिर में दिव्य जल को ग्रहण किया जाता है, पूजा की प्रतिमाओं पर पवित्र जल छिड़का जाता है, तथा भोजन के लिए रखे गए एक पत्ते को पानी से साफ किया जाता है और इसकी पूजा की जाती है। तालिका 1.1 में कुछ महत्वपूर्ण श्लोक दिए गए हैं जिन्हें जल को भगवान के रूप में पूजते समय उच्चारित किया जाता है:-

तालिका 1.1 कुछ चयनित श्लोक (प्रार्थना) जिनके द्वारा जल देवता की अर्चना की जाती है :-

आपो हिष्ठा मयोभुवस्था न ऊर्जे दधातन। महे रणाथ चक्षसे ॥1॥	हे जल! आपकी उपस्थिति से वायुमंडल बहुत तरोताजा है, और यह हमें उत्साह और शक्ति प्रदान करता है। आपका शुद्ध सार हमें प्रसन्न करता है, इसके लिए हम आपको आदर देते हैं।
यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयतेह नः। उश्तीरिव मातरः ॥2॥	हे जल! आप अपना यह शुभ सार, कृपया हमारे साथ साझा करें, जिस प्रकार एक मां की इच्छा होती है कि वह अपने बच्चों को सर्वश्रेष्ठतम प्रदान करे।
तस्मा अरं गमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ। आपो जनयथा च नः ॥3॥	हे जल! जब आपका उत्साही सार किसी दुखी प्राणी को प्राप्त होता है, तो वह उसे जीवंत कर देता है। हे जल! इसलिए आप हमारे जीवन दाता हैं।
द्रां नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये। द्रां योरभि स्रवन्तु नः ॥4॥	हे जल! जब हम आपका सेवन करते हैं तो उसमें शुभ दिव्यता होने की कामना करते हैं। जो शुभकामनाएँ आप में विद्यमान हैं, उसका हमारे अंदर संचरण हो।
ईशाना वार्याणां क्षयन्तीश्चर्षणीनाम्। अपो याचामि भेषजम् ॥5॥	हे जल! आपकी दिव्यता कृषि भूमियों में भी संचरित हो!। हे जल, मेरा आग्रह है कि आप फसलों का समुचित पोषण करें।
अप्सु मे सोमो अग्रवीदन्तर्विष्वानि भेषजा। अग्नि च विश्वभुवम् ॥6॥	हे जल, सोमा ने मूझे बताया कि जल में दुनिया की सभी औष्धीय जड़ी बूटियाँ और अग्नि, जो दुनिया को सुख-समृद्धि प्रदान करती है, भी मौजूद है।
आपः पृणीत भेषजं वरूथं तन्वेS मम। ज्योक्च सूर्यं दृशे ॥7॥	हे जल, आप में औष्धीय जड़ी बूटियाँ प्रचुर मात्रा में समायी हुई हैं; कृपया मेरे शरीर की रक्षा करें, ताकि मैं सूर्य को लंबे समय तक देख सकूं (अर्थात मैं लंबे समय तक जीवित रह सकूँ।

इदमापः प्र वहत यत्ि्क च दुरितं मयि। यद्वाहमभिदुद्रोह यद्वा शेप उतानृतम॥8॥	हे जल, मुझ में जो भी दुष्ट प्रवृतियाँ हैं, कृपया उन्हें दूर करें, और मेरे मस्तिष्क में विद्यमान समस्त विकारों को दूर करें और मेरे अंतर्मन में जो भी बुराइयाँ हैं उन्हें दूर करें।
आपो अद्यान्वचारिद्गां रसेन समगस्महि। पयस्वानग्न आ गहि तं मा सं सृज वर्चसा॥9॥	हे जल, आप जो उत्साही सार से भरे हुए हैं, मैं आपकी शरण में आया हूँ। मैं आप में गहराई से सम्माहित हूं (अर्थात स्नान) से घिरा हुआ है (अग्नि सिद्धांत) जो अग्नि (कर; मुझमें चमक पैदा करे।

प्राचीन भारत में जलविज्ञानीय ज्ञान

हाइड्रो साइंस के ऐतिहासिक विकास पर कई लेखकों (बेकर और हॉर्टन, 1936, चाउ, 1964, विश्वास, 1970) ने सघन शोध एवं प्रकाशन का कार्य किया है लेकिन इन सभी कार्यों में प्राचीन भारत में किए गए कार्यों का संदर्भ विशिष्ट रूप से अनुपस्थित है । (प्रसाद, 1980) । उदाहरण के लिए चाउ (1964) ने जलविज्ञान के इतिहास के वर्णन में ग्रीस में होमर, थेल्स, प्लेटो, अरस्तु, रोम में प्लिनी और उस समय के कई बाइबल विद्वानों के कार्यों का उल्लेख किया है लेकिन किसी ने भी भारतीय विद्वान, साहित्य, और उनके महान योगदान का जिक्र नहीं किया गया है । इनमें से अधिकांश पश्चिमी विद्वानों ने जल की उत्पत्ति के बारे में बेबुनियाद सिद्धांतों पर विश्वास किया । उदाहरण के लिए थेल्स, एक आयनियन दार्शनिक, गणितज्ञ और खगोलशास्त्री ने कहा कि समुद्र का पानी हवा से चट्टानों में चला जाता है यही भूजल का कारक है । प्लेटो (427-347 ईसा पूर्व), एक महान एथेनियन दार्शनिक ने कहा है कि समुद्रों, नदियों, झरनों आदि का पानी एक बड़े भूमिगत जलाशय से आता है और वही वापस चला जाता है । अरस्तु (384-322 ईसा पूर्व) ने कहा कि झरनों आदि का पानी भूमिगत जल से भूमिगत ओपनिंग के माध्यम से प्राप्त होता है । प्रसिद्ध साधु दार्शनिक लुसियस एनाकस सेनक्का (4 ईसा पूर्व) ने घोषणा की कि वर्षा, स्प्रिंग और भूमिगत जल का स्रोत नहीं हो सकती क्योंकि यह पृथ्वी में केवल कुछ ही फुट तक प्रवेश करता है । (प्रसाद, 1980) । मार्क्स विट्रुवेज जो ईसा मसीह के समय में रहे हैं, ने एक सिद्धांत बनाया कि भूजल वर्षा का एक हिस्सा है जो कि अन्त:स्यन्दन के माध्यम से उत्पन्न होता है । पश्चिमी विद्वानों के ये सभी सिद्धांत प्राचीन काल में पश्चिमी दुनिया में जलविज्ञान के विकास के निम्न स्तर का संकेत देते हैं । दूसरी ओर समकालीन भारतीय विद्वानों ने जलविज्ञान के विभिन्न पहलुओं के उन्नत स्तर के ज्ञान का विकास किया था जैसा कि प्राचीन भारतीय साहित्य में परिलक्षित होता है जिसमें जलविज्ञान

और उनके व्यावहारिक अनुप्रयोगों पर बहुत मूल्यवान और महत्वपूर्ण वैज्ञानिक जानकारियां दी गई हैं । इस बात के प्रमाण के लिए पर्याप्त पुरातात्विक तथ्य हैं कि सिंधु घाटी के हड़प्पाकालीन लोग (2500 और 1700 ईसा पूर्व) मौसमी वर्षा और सिंधु नदी की बाढ़ से संबंधित घटनाओं के बारे में अच्छी जानकारी रखते थे जो आधुनिक मौसम संबंधी जांच (श्रीनिवासन, 1975) द्वार अनुमोदित है । वैदिक ग्रन्थ, जिनकी रचना संभवत: 1500 से 1200 ईसा पूर्व (कुछ विद्वानों के अनुसार 1700-1100 ईसा पूर्व) के बीच हुई थी, में ''जलविज्ञानीय चक्र'' के लिए महत्वपूर्ण संदर्भ शामिल है । जलविज्ञान की महत्वपूर्ण अवधारणाएं विभिन्न श्लोकों और वेदों में विभिन्न देवताओं की अराधनाओं और प्रार्थनाओं में दी गई हैं । इसी तरह अन्य संस्कृत साहित्य में भी जलविज्ञान से संबंधित महत्वपूर्ण जानकारियां समाहित हैं ।

भारत के क्षेत्रों में तथा दुनिया में कहीं भी कृषि की उत्पत्ति और विकास और सिंचाई में अनुभव अलग-अलग प्रक्रियाएं नहीं हैं, जैसा कि यजुर्वेद के निम्नलिखित श्लोकों से स्पष्ट है:-

कृषिश्चमें यज्ञेनकल्पंताम।
वृष्टश्चमें यज्ञेनकल्पंताम।। यजुर्वेद, 18–9।।
मारूतश्चमें यज्ञेनकल्पंताम।। यजुर्वेद, 18–17।।

ये श्लोक वर्षा, कृषि और वायु या पर्यावरण और उनके अंतर्संबंध के लिए यज्ञ के महत्व को दर्शाते हैं ।

जलविज्ञानीय चक्र की विभिन्न प्रक्रियाओं जैसे कि वाष्पीकरण, संक्षेपण, वर्षा, धारा प्रवाह आदि के दौरान जल का क्षय नहीं होता है बल्कि एक रूप से दूसरे रूप में परिवर्तित हो जाता है । इसका वैदिक एवं बाद के समय काल के लोगों को पूर्णत: ज्ञान था । पौधों द्वारा पानी का अंत:ग्रहण, विभिन्न प्रकार के बादलों, उनकी ऊंचाई वर्षा क्षमता, सूर्यकी किरणों और हवा द्वारा सूक्ष्म कणों में पानी का विभाजन तथा पिछले वर्षा के प्राकृतिक परिदृश्यों के पूर्वानुमान के प्रेक्षणों के आधार पर वर्षा की मात्रा के पूर्वानुमान पुराणों, वृहतसंहिता (550 ए.डी.), मेघमाला (900 ए.डी.) आदि में भी उपलब्ध है । कौटिल्य के अर्थशास्त्र (400 ईसा पूर्व) तथा पाणिनी की अष्टाध्यायी (700 ईसा पूर्व) में वर्षा मान/वर्षा यंत्रों का संदर्भ उपलब्ध है । भारत के विभिन्न भागों में वर्षा की मात्रा की भविष्यवाणी भी कौटिल्य ने की थी । भारतीय लोग वर्षा पर चक्रवाती प्रभाव, भौगोलिक प्रभाव, विकिरण और वाष्पीकरण तथा पृथ्वी के संवहन हीटिंग के प्रभाव से भली-भांति परिचित थे । उस काल में विभिन्न अन्य पहलुओं जैसे कि अंत:स्यंदन, अवरोधन, धारा प्रवाह, भूआकृतिकी विज्ञान तथा वर्षा की अपरदन क्रिया की भी जानकारी उपलब्ध थी । महाकाव्य रामायण (200 ईसा पूर्व) में आर्टिशियन कुओं के संदर्भ भी उपलब्ध हैं।

प्राचीन भारत में भूमि जल विकास और जल की गुणवत्ता पर भी पर्याप्त ध्यान दिया जाता था जैसा कि वृहतसंहिता (550 ए.डी.) से स्पष्ट है ।

जल प्रबंधन और संरक्षण, 400 ई.पू. के आस-पास सुसंगठित जल मूल्य निर्धारण प्रणाली, बांधों, टैंकों आदि की निर्माण विधियाँ और सामग्री, बैंक संरक्षण, स्पिलवे आदि के संदर्भ प्राचीन संस्कृत साहित्य में प्राचीन भारत में जल संसाधनों तथा जलविज्ञान के विकास के उच्च स्तर को दर्शातें हैं । वैदिक साहित्य, अर्थशास्त्र, पुराणिक स्रोतों, वृहत्संहिता, मयूराचित्रा, मेघमाला, जैन, बौद्ध और अन्य प्राचीन भारतीय साहित्यों में असंख्य संदर्भ विद्यमान हैं जो प्राचीन भारत में जलविज्ञान और जल संसाधनों की स्थिति का वर्णन करते हैं । जलविज्ञान और जल संसाधनों के विभिन्न तत्व जिन पर विभिन्न प्राचीन भारतीय साहित्यों में और कुछ लेखकों द्वारा चर्चा की गई जैसे कि त्रिपाठी (1969), प्रसाद (1980), प्रसाद (1987) आदि, उनकी समीक्षा और विश्लेषण किया गया है और उन्हें इस खंड में प्रस्तुत किया गया है ।

प्राचीन भारत में जलविज्ञान और जल संसाधनों के विभिन्न पहलुओं पर चर्चा की गई है और उन्हें इस रिपोर्ट में निम्नलिखित अध्यायों के तहत प्रस्तुत किया गया है:-

1 परिचय
2. जलविज्ञानीय चक्र
3. बादल निर्माण, वर्षा, और इसका मापन
4. अवरोधन, अंतस्यन्दन और वाष्पीकरण,
5. भू-आकृतिविज्ञान और सतही जल
6. भूजल
7. जल गुणवत्ता और अपशिष्ट जल प्रबंधन
8. जल संसाधन उपयोग, संरक्षण और प्रबंधन
9. निष्कर्ष